

यातायात की समस्या

Yatayat Ki Samasya

बीसवीं शताब्दी के अंतिम चरणों में और इक्कीसवीं सदी के द्वार के समीप पहुंचते-पहुंचते जब कस्बे और सामान्य नगर बड़े-बड़े नगरों का दृश्य उपस्थित करने लगे हों, तब जिन्हें पहले ही महानगर कहा जाता है, उनकी दशा का अनुमान सहज और स्वतः ही होने लगता है। जहां जाइए, मनुष्यों की भीड़ का ठाठें मारता अथाह सागर, जिसका कोई ओर-छोर नहीं-कुछ ऐसी ही स्थिति हो गई है आज हमारे महानगरों की। अभाव-अभियोग से त्रस्त ग्रामीण, कस्बों और छोटे नगरों के बेगार, उद्योग-धंधों का विस्तार, काम की तलाश में भटकती मानसिकता-जितने प्रकार के भी नाले और नदियाँ हो सकते हैं, आज उन सभी का रुख महानगर रूपी सागर की ओर ही है। यही कारण है कि स्वतंत्र भारत में महानगरों की समस्याएं प्रतिपल, प्रतिक्षण बढ़ती ही जा रही हैं। सांख्यिकी के ज्ञाताओं का अनुमान है कि अकेले महानगर दिल्ली में प्रतिदिन 12 से 15 हजार ऐसे लोग आते हैं कि जो यहीं बस जाना चाहते हैं और बस भी जाया करते हैं। काम-काज या सैर-सपाटे के लिए आने वालों की संख्या इनमें शामिल नहीं है। यही स्थिति अन्य महानगरों की भी कही जा सकती है। इसी कारण महानगरों की समस्याएं बढ़ती ही जा रही हैं। यहां हम अन्य समस्याएं न लेकल केवल यातायात की समस्या पर विचार करेंगे।

महानगरों में यातायात के अनेक साधन उपलब्ध हैं। रेल, कार, स्कूटर, टैक्सी, बस, तांगा, साइकिल, रिक्शा आदि। कार-स्कूटर आदि पर दैनिक यात्रा केवल साधन-संपन्न लोग ही कर पाते हैं। आम आदमी में ऐक्सी पर यात्रा करने का सामर्थ्य नहीं है। सुख-दुख के आपात क्षणों में ही आम आदमी टैक्सी-स्कूटर का झिझक के साथ प्रयोग कर पाता है। महानगरों का विस्तार इस सीमा तक हो चुका है, काम-धंधे के क्षेत्र घरों से इतनी दूर हो चुके हैं कि तांगा-रिक्शा और प्रायः साइकिल भी इस सबके लिए अनुपयोगी बन चुका है। इस प्रकार के यातायातीय साधनों का उपयोग लगभग स्थानीय तौर पर ही कभी-कभार किया जाता है। शेष रह जाती है-बस। या फिर स्थानीय रेलें, कि जो सभी जगह उपलब्ध नहीं है। इस प्रकार कुल मिलाकर नगरीय बस-सेवा को ही यातायात का वह सुलभ साधन कहा जा सकता है कि जिसका प्रयोग आम आदमी कर सकता है और कर भी रहा है। परंतु

महानगरों की आबादी जिस अनुपात से बढ़ी है, बस-सेवाओं का विस्तान उस अनुपात से संभव नहीं हो सका। यही कारण है कि महानगर-निवासी आम लोगों को आज प्रतिदिन, दिन में कम से कम दो बार बसों में सवाल होकर अवश्य ही, जिस भयावह समस्या से जूझने को बाध्य होना पड़ता है वह है यातायात की समस्या।

महानगरों में यातायात के लिए बस-सेवा की व्यवस्था प्रायः सरकारी व्यवस्था के अंतर्गत ही उपलब्ध है। अब दिल्ली जैसे महानगरों में इस सेवा का समूचा निजीकरण हो रहा है। इसके लिए कभी बंबई, मद्रास, पुणे, सिंदराबाद एवं अन्य दक्षिणीय महानगरों की बस-सेवा को आदर्श माना जाता था। परंतु आज वहां भी स्थित निरंतर बिगड़ती जा रही है। मद्रास, बंबई जैसे महानगरों में यदि स्थानीय रेल-सेवा न हो, तो निश्चय ही वहां की स्थिति भी शीघ्र ही दयनीय हो जाएगी। जहां तक कलकता और दिल्ली जैसे महानगरों का प्रश्न है यहां की यातायात की व्यवस्था पर इतना अधिक जनसंख्या का बोझ है कि वह अपने आरंभ से ही चरमराई हुई जिस किसी तरह घिसटी जा रही है। कलकता में तो अभी ट्राम और स्थानीय रेल सेवा भी है सरकारी बस सेवा के साथ-साथ निजी बस-सेवा भी है। पुर भी इन सबमें जो भीड़ रहती है भेड़-बकरियों की तरह जो मानव-नामक प्राणी ठुंसे रहते हैं, कई बार तो उन सबका दर्शन रोंगटे खड़े कर देने वाला हुआ करता है। दिल्ली में क्योंकि ट्राम और स्थानीय रेल-सेवा नहं है, इस कारण यहां की बस-सेवा की दशा भारत के समस्त महानगरों में से सर्वाधिक दयनीय स्वीकार की जाती है। आबाद के अनुपात में बसें बहुत कम हैं। इस कारण किसी भी रूट पर एक बस ओन पर बच्चे-बूढ़ों, पुरुषों-महिलाओं आदि सभी को उनके पीछे बेतहाशा इस प्रकार भागते हुए देखा जा सकता है कि जैसे पीछे बम फट गया हो। अक्सर लोगों को कहते सुना जा सकता है कि भागना सिखा दिया है इन बस वालों ने। रोटी हज्म हो गई। कपड़े अपने-आप ही प्रेस हो गए।

विशेषकर कलकता और दिल्ली महानगरों की बसों के भीतर व्यक्ति की जो दशा होती है, वह अनुभवी ही जानता है। बस-सेवा की कमी ने सामान्य शिष्टाचार और सभ्याचार भी लोगों को भुला दिया है। बस आते ही मार-धाड़ मच जाती है। बसों के भीतर झगड़े होते हैं, जेबें कटती हैं, महिलाओं के साथ छेड़खानी आम बात है। महानगर दिल्ली की बसों में तो सभ्याचार का इस समा तक अभाव हो चुका है कि पुरुष महिलाओं के लिए सुरक्षित सीटों पर बैठकर आग्रह करने पर भी उठना नहीं चाहते। दिल्ली के बाहर शेष किसी भी महानगरीय

बस-सेवा में इस प्रकार का अनाचार कहीं भी देखने को नहीं मिलता। राजधानी के वासियों के लिए निश्चय ही यह अत्याधिक लज्जा और उनके पुरुषत्व पर कलंक की बात है।

जो हो, सार-तत्त्व यह है कि महानगरों में आबादी के अनुपात से यातायात के सर्वसुलभ साधन नहीं बढ़े, इस कारण स्थिति बड़ी ही विषम है। महानगरीय प्रशासन और यातायात व्यवस्था करने वाले निगमों को चाहिए कि वे यह समझें कि मनुष्य आखिर मनुष्य ही होता है, भेड़-बकरी नहीं। अतः यथासंभव ऐसी व्यवस्था की जाए कि हर व्यक्ति तनिक आरम से, ठीक समय पर अपने गंतव्य पर पहुंच सके। ऐसा यातायात भी सर्वसुलभ व्यवस्था बस-सेवा को बढ़ाकर उसे चलने वालों को सभ्य-सुसंस्कृत बनकर ही संभव हो सकता है।